भारतीय राजनीति में जयप्रकाश नारायण के विचारों का अध्ययन

Pinky Prajapat

Research Scholar, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur

Dr. P. R. Meena,

Faculty Member, Maharaj Vinayak Global University, Jaipur

सारांश

लोकनायक जयप्रकाश नारायण एक राजनीतिक दार्शनिक की अपेक्षा एक सामाजिक दार्शनिक अधिक थे। उन्होंने जीवन भर साधारण जनता के कल्याण के लिए अपना संघर्ष किया। उन्होंने राजनीतिक भ्रष्टाचार को सभी सामाजिक समस्याओं की जड़ माना और समय–समय पर राजनीति में सुधारों के बारे में अपने मूल्यवान सुझाव दिए ताकि राजनीति में नैतिक साधनों का उचित प्रयोग किया जा सके। उन्होंने व्यवहारिक समस्याओं के अनुरूप ही राजनीतिक विचारों का प्रतिपादन करके भारतीय राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में अपना अमूल्य योगदान दिया। जयप्रकाश नारायण राजनीतिक विचार और सिद्धांत आज भी उतने ही प्रासंगिक और देश के युवाओं के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। आजादी और देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना के बाद महात्मा गांधी की परंपरा को आगे ले जाने में जिन नेताओं की भूमिका को सबसे ज्यादा याद किया जाता है उनमें जय प्रकाश नारायण सबसे महत्वपूर्ण है। आजादी के बाद के पहले आम चुनाव के बाद से ही जय प्रकाश के मानने लगे थे कि राज सत्ता चाहे जिस रूप में हो वह कल्याणकारी नहीं हो सकती है। उनका कहना था कि उसमें जनता की भागीदारी का प्रभाव नहीं होता है, अपने इन्हीं विचारों का अनुसरण करते हुए जब उन्होंने देखा कि राजसत्ता आक्रामक तानाशाह की तरह काम करने लगी है जिस में लोकतंत्र न के बराबर है तो वह खड़े हुए और उसे उखाड़कर फ़ेकने में भी सफल हुए।

मुख्यशब्द- भारतीय राजनीति, जयप्रकाश नारायण के विचार, राजनीतिक दार्शनिक, राजनीतिक भ्रष्टाचार, राजनीतिक विचार और सिद्धांत

प्रस्तावना

लोकनायक जयप्रकाश नारायण एक राजनीतिक दार्शनिक की अपेक्षा एक सामाजिक दार्शनिक अधिक थे। उन्होंने जीवन भर साधारण जनता के कल्याण के लिए अपना संघर्ष किया। उन्होंने राजनीतिक भ्रष्टाचार को सभी सामाजिक समस्याओं की जड़ माना और समय–समय पर राजनीति में सुधारों के बारे में अपने मूल्यवान सुझाव दिए ताकि राजनीति में नैतिक साधनों का उचित प्रयोग किया जा सके। उन्होंने व्यवहारिक समस्याओं के अनुरूप ही राजनीतिक विचारों का प्रतिपादन करके भारतीय राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में अपना अमूल्य योगदान दिया।

जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक विचार

समाजवाद की अवधारणा

अपने अमेरिकी प्रवास के दौरान जयप्रकाश नारायण ने लेनिन तथा मार्क्स के साम्यवादी साहित्य का अध्ययन किया और भारत आने पर उनकी सोच मार्क्सवादी बन गई। उन्होंने 1936 में 'Why Sociaism' पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक के माध्यम से उन्होंने समाजवाद की भारतीय सन्दर्भ में व्याख्या की तथा भारत में इसकी उपयोगिता पर बल दिया। उन्होंने समाजवाद को लोकप्रिय बनाने के लिए जीवनभर संघर्ष किया। उनका मानना था कि आर्थिक असमानता और उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व ही सब समस्याओं की जड़ है। यदि ये साधन प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध करा दिए जाएं तो वर्तमान आर्थिक विषमताएं स्वत : ही समाप्त हो जाएंगी।

उन्होंने समाजवादी समाज की स्थापना पर अपनी पुस्तक 'Why Socialism' में विस्तारपूर्वक वर्णन किया और उद्योग एवं कृषि के क्षेत्र में उन उपायों का सुझाव दिया, जिनसे उत्पादन के साधनों का पुन : वितरण कर आर्थिक समानता स्थापित की जा सके। उनका विचार था कि उद्योगों के राष्ट्रीयकरण मात्र से ही समाजवाद की स्थापना सम्भव नहीं है।

इससे नौकरशाही के हाथ मजबूत होते हैं तथा केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति बढ़ती है। इसी तरह बड़े स्तर के उद्योग की आर्थिक विषमता को बढ़ावा देते हैं, कम नहीं करते। इसलिए उन्होंने विकेन्द्रीकरण का सुझाव दिया और छोटे–छोटे उद्योगों की आर्थिक विषमता दूर करने में सहायक बताया, उन्होंने कृषि के क्षेत्र में भी समाजवाद का अर्थ स्पष्ट करते हुए बताया कि भूमि का स्वामित्व जोतने वालों के हाथ में में हो, जमींदारी प्रथा को समाप्त किया जाए तथा सहकारी कृषि को बढ़ावा दिया जाए। इसके अतिरिक्त सहकारी ऋण तथा बाजार व्यवस्था आदि के माध्यम से किसानों को साहूकारों व व्यापारियों के शोषण से मुक्त किया जाए।

इस तरह उन्होंने कृषि तथा उद्योग दोनों में ही उत्पादन के साधनों के विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया। उन्होंने कृषि उद्योगों के समाजीकरण के लिए नैतिक व लोकतांत्रिक साधनों का सुझाव दिया। उनका मानना था कि समाजवाद जैसे उच्च आदर्श की स्थापना उचित साधनों के द्वारा ही होनी चाहिए। लेकिन सच्चे समाजवाद की स्थापना भारत को तब तक नहीं हो सकती, जब तक भारत विदेशी दासता का शिकार रहेगा। विदेशी दासता को समाप्त करने के लिए श्रमिकों, किसानों और गरीब मध्यम वर्गों में राजनीतिक चेतना का विकास किया जाए।

उन्होंने अपनी पुस्तक 'Why Socialism' में लिखा है–''कोई भी दल समाजवाद की स्थापना तब तक नहीं कर सकता, जब तक वह राज्य की शक्ति अपने हाथ में न ले लें। चाहे वह से जनता के समर्थन से प्राप्त करें या सरकार गिरा कर। यदि सम्भव हो तो इस ध्येय को जन समर्थन द्वारा ही प्राप्त किया जाना चाहिए।'

उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि जब किसान, दलित, गरीब सभी कमजोर वर्गों में वर्ग–चेतना का उदय होगा तो समाजवाद की स्थापना हो जाएगी, उन्होंने यह भी कहा कि वर्ग चेतना के साथ–साथ व्यक्ति को अपनी भौतिक आवश्यकताओं पर भी नियन्त्रण करना होगा। इसके बिना समाजवादी समाज की स्थापना सम्भव नहीं है। उन्होंने कहा कि समाजवाद भारतीय संस्कृति का विरोधी नहीं है। यह उसके अनुरूप ही है।

जयप्रकाश नारायण के राष्ट्रवादी सम्बन्धी विचार

लोकनायक जयप्रकाश नारायण सच्चे देश भक्त थे। उन्हें भारत की पराधीनता को दूर करने की बहुत अधिक चिन्ता थी। उन्होंने अपनी रचनाओं में राष्ट्रवाद के महत्व को प्रतिपादित किया है। उन्होंने लिखा है कि रजनीतिक स्वतन्त्रता के बिना सामाजिक व आर्थिक कल्याण की योजनाओं का कोई महत्व नहीं है। वे एक राष्ट्रवादी क्रान्तिकारी थे और कई बार जेल भी गए। उन्होंने राष्ट्रवाद के महत्व के बारे में कहा है कि ''जब तक प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में राष्ट्रवाद की भावना का विकास नहीं होगा तब तक देश का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। भारत में सांस्कृतिक एकता होते हुए भी राजनीतिक एकता का अभाव है।

भारत में ब्रिटिश शासन द्वारा सम्पूर्ण भारतीय प्रदेश पर अधिकार करने के बाद ही एक सरकार के अन्तर्गत राष्ट्रीय एकता का उदय हुआ है।'' लेकिन यह राजनीतिक एकता ऊपर से थोपी हुई है। इसके द्वारा राष्ट्रवाद की स्थपना नहीं हो सकती। ब्रिटिश शासन के खिलाफ जब तक सारी जानता एकजुट नहीं होगी, तब तक राष्ट्रीयता का विकास नहीं हो सकता।

उन्होंने राष्ट्रीय एकता के लिए धर्म–निरपेक्ष दृष्टिकोण अपनाने का सुझाव दिया है। यह दृष्टिकोण राजनीतिक क्षेत्र के साथ–साथ सामाजिक क्षेत्र में भी लागू किया जाना चाहिए। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति को एक–दूसरे की धार्मिक भावना का आदर करना चाहिए। धार्मिक अन्धविश्वासों व कुरीतियों से दूर रहना चाहिए तथा धर्म के प्रति विवेकपूर्ण, मानवीय तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

उन्होंने कहा है–''राष्ट्रीय एकता के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति धार्मिक अन्धविश्वासों से बाहर निकलकर अपने अन्दर एक बौद्धिक व वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करें।'' उनका मानना था कि भारत एकता की प्रक्रिया मूल रूप से बौद्धिक एवं आध्यात्मिक चेतना की प्रक्रिया है। इसलिए समस्त जनता को न्यायपूर्ण साधनों के साथ इसमें अपना योगदान देना चाहिए।

इस तरह जयप्रकाश नारायण की राष्ट्रवाद की अवधारणा संकीर्ण न होकर एक व्यापक धारणा है। उनका राष्ट्ररवाद समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए है। उनका राष्ट्रवाद भारतीय सभ्यता व संस्कृति के सर्वथा अनुरूप ही है। उनका राष्ट्रवाद महात्मा गांधी व रविन्द्र नाथ ठाकुर के मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित है जो समस्त मानव जाति को अपने में अंगीकार कर लेता है।

आधुनिक लोकतंत्र की अवधारणा

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि आधुनिक युग संसदीय लोकतन्त्र का युग है। इस लोकतन्त्र में संविधान, दलों और चुनावों का बहुत महत्व है। लेकिन ये बातें तब तक अर्थहीन है, जब तक जनता में नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक गुणों का विकास न हो जाए। इसलिए उन्होंने लोकतन्त्र को दलीय–विहीन लोकतन्त्र बनाने पर जोर दिया, उन्होंने लोकतन्त्र की चुनाव–प्रणाली को अस्वीकार किया है। उनका मानना है कि हर चुनाव क्षेत्र में उम्मीदवारों की संख्या अधिक होने पर मतों का बंटवारा हो जता है। साधारण बहुमत वाला उम्मीदार भी ि◌वेजेता घोषित कर दिया जाता है। इसलिए अल्पमतों से विजयी उम्मीदवार बहुमत का प्रतिनिधि नहीं हो सकता। अल्पमत के आधार पर बनी सरकार कभी भी लोकतन्त्रीय सरकार नहीं बन सकती।

इस तरह संसदीय लोकतन्त्र का आधार बड़ा ही संकुचित होता है। इसी तरह संसदीय लोकतन्त्र में दलों की भूमिका भी नकारात्मक होती है। वे जनता से झूठे वायदे करके वोट बटोरते हैं। बाद में राजनीतिक सत्ता पर काबिज होकर अपने संकीर्ण स्वार्थों को पूरा करते हैं। उन्हें सार्वजनिक हितों से कोई सरोकार नहीं होता।

जयप्रकाश नारायण ने लिखा है–''राजनीतिक दलीय प्रणाली में जनता की स्थिति उन भेड़ों की तरह होती है जो निश्चित अवधि के पश्चात् अपने लिए ग्वाला चुन लेती है। ऐसी लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली में मैं उस स्वतन्त्रता के दर्शन कर नहीं पाता जिसके लिए मैंने तथा जनता ने संघर्ष किया था।'' आधुनिक राजनीतिक दल जो वास्तव में राजनीतिज्ञों का एक छोटा–सा शक्तिशाली समूह है जो जनता के नाम पर शासन करता है और लोकतन्त्र एवं स्वशासन का भ्रम फैलाकर स्वार्थपूर्ण कार्यों को पूरा करता है।

इसके कारण व्यक्ति की स्वतन्त्रता का ह्रास होता है। इसलिए आधुनिक लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों की भूमिका एक अभिशाप है। ये दल समाज के नैतिक पतन का मुख्य कारण है। ये लोगों को राजनीतिक शिक्षा देने की बजाय अनैतिक साधनों का प्रसार करते हैं और जनता को पथभ्रष्ट करते हैं। आधुनिक लोकतन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के लिए राजनीतिक दल ही उत्तरदायी हैं। ये राष्ट्रीय हितों का बलिदान देने से भी नहीं चूकते। ये धन, संगठन और भ्रामक प्रचार के माध्यम से वोट बटोरते हैं और सार्वजनिक कहतों की आड़ में अपनी स्वार्थ सिद्धि करते हैं।

इस तरह जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक दलों की प्रजातन्त्र में नकारात्मक भूमिका पर व्यापक प्रकाश डाला है। उन्होंने संसदीय लोकतन्त्र की चुनाव–पद्धति की भी आलोचना की है। उन्होंने इस पद्धति को खचरीली पद्धति मानकर लोकतन्त्र को दल–विहीन बनाने पर जोर दिया है।

दल–विहीन लोकतंत्र की अवधारणा

लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने संसदीय लोकतन्त्र की आलोचना को अपनी दल–विहीन प्रजातन्त्र की अवधारणा का आधार बनाया। उनका विचार था कि आधुनिक लोकतन्त्र में दलीय व्यवस्था इतनी प्रभावी हो गई है कि लोकतन्त्र दलतन्त्र बन गया है। यह दलतन्त्र राजनीतिक भ्रष्टाचार को फैलाता है और लोगों में फूट डालता है। इसकी औचित्यता शक्तिपूर्ण साधनों में है। यह अनैतिक साधनों का प्रयोग करके जनतन्त्र के वास्तविक अर्थ को दूषित कर रहा है। इसलिए जय प्रकाश नारायण के दल–विहीन लोकतन्त्र की अपधारणा का प्रतिपादन किया ताकि दलों की गैर जिम्मेदाराना भूमिका पर अंकुश लग सके। दल विहीन प्रजातन्त्र को लागू करने के बारे में जयप्रकाश नारायण ने चार प्रमुख सुझाव दिए हैं–

1. सबसे पहले लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों को समाप्त किया जाए। चुनाव प्रणाली समाप्त करके जनता द्वारा ग्राम स्तर से केन्द्रीय स्तर तक के उम्मीदवारों का प्रत्यक्ष चुनाव किया जाए। प्रत्येक गांव में से ग्राम सभा दो सदस्य निर्वाचित करके उस निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता परिषद के पास भेजे इसके बाद मतदाता परिषद की खुली बैठक में राज्य विधानपालिका या केन्द्रीय संसद के लिए उम्मीदवारों के नाम प्रस्तावित तथा समर्थित किए जाएं। इसके बारे में सबकी राय एक बनाने का प्रयास किया जाए। यदि आम राज्य न बन पाए तो 30% से अधिक मत प्राप्त व्यक्ति को संसद या विधानपरिषद का प्रतिनिधि घोषित कर दिया जाए।

2. दलगत राजनीति से मुक्त सर्वोदय समाज की स्थापना की जाए।

3. सभी दलों को सर्वोदय के कार्य में शामिल होने के लिए आमन्त्रित किया जाए ताकि दलगत भावना का अन्त हो।

4. निर्वाचित होने केबाद सभी उम्मीदवारों को अपने दल से नाता तोड़ लेना चाहिए ताकि वह स्वतन्त्र आत्मा की आवाज द्वारा मताधिकार का प्रयोग कर सके और दल के कठोर सिद्धान्तों के पाश से मुक्ति पा सके।

इस प्रकार जयप्रकाश नारायण ने दल–विहीन प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए अपना व्यावहारिक कार्यक्रम सुझाया है। इससे उनकी राजनीति के प्रति गहरी व दूरदर्शी सोच का पता चलता है। उनका यह कथन सत्य है कि राजनीतिक दल ही सभी तरह की राजनैतिक समस्याओं की जड़ है।

जयप्रकाश नारायण के राज्य सम्बन्धी विचार

जयप्रकाश नारायण भी गांधीवाद तथा माक्र्सवादी विचारधारा की ही तरह राज्य को एक आत्मा रहित मशीन मानते थे, यह एक ऐसा यन्त्र है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में बाधा पहुंचाता है। इसलिए उन्होंने राज्य को कम शक्तियां देने की बात कही है। उन्होंने कल्याणकारी राज्य की धारणा को भी नौकरशाही के हितों का पोषक बताया है। उनका कहना है कि कल्याणकारी राज्य के नाम पर नौकरशही जनता के कल्याण की योजनाओं का अधिकतम हिस्सा डकार जाती है। उन्होंने माक्र्स के राज्य के लुप्त होने के विचार का भी खण्डन किया है। इसलिए इसका अस्तित्व में रहना नितान्त आवश्यक है।

गांधी जी की तरह वे भी राज्य को कम से कम शक्तियां सौंपने के पक्ष में थे। उन्होंने कहा है–''मुझे न तो पहले विश्वास था और न अब है कि राज्य पूर्ण रूप से कभी लुप्त हो जाएगा। परन्तु मुझे यह विश्वास है कि राज्य के कार्यक्षेत्र को जहां तक सम्भव हो घटाने के प्रयास करना सबसे अच्छा उद्देश्य है।

जयप्रकाश नारायण के पंचायती राज सम्बन्धी विचार

जयप्रकाश नारायण की विकेन्द्रीकरण की अवधारणा का सीधा लक्ष्य पंचायती राज की स्थापना करना था। उन्होंने राजनीतिक विकेन्द्रीकरण को व्यावहारिक रूप देने के लिए स्थानीय संस्थाओं को अधिक शक्तियां प्रदान करने पर बल दिया। उनका मानना था कि भारत को आर्थिक व राजनीतिक समस्याओं का हल केवल पंचायती राज में ही संभव है।

उन्होंने कहा है कि ग्राम पंचायत में सभी व्यस्क नर–नारी मिलकर अपनी कार्यपालिका का निर्माण करेंगे और ग्राम सभा के ऊपर एक ब्लाक समिति होगी जो कई गांवों को मिलाकर बनाई जाएगी। सबसे ऊपर जिला परिषद होगी। लेकिन इस प्रक्रिया में कुछ बाधाएं भी आएंगी। उन्हें शिक्षा के माध्यम से दूर करने के प्रयास किए जाएंगे। ग्राम पंचायतों की नौकरशाही पर नियन्त्रणरखने का अधिकार होगा।

जयप्रकाश नारायण के अन्य राजनीतिक विचार

जयप्रकाश नारायण ने कुछ अन्य राजनीतिक विचारों का भी प्रतिपादन किया है। उन्होंने राजनीति को नैतिकता के सथ जोड़कर उसका आध्यात्मिकरण करने पर बल दिया है। उसका मानना है कि नैतिकता विहीन राजनीति जनकल्याण का साधन कभी नहीं बन सकती। इसी तरह उन्होंने साध्य व साधन की पवित्रता पर भी बल दिया है। उन्होंने सम्पूर्ण क्रान्ति का नारा देते हुए कहा था कि भारतीय समाज का नैतिक पतन इसलिए हुआ है कि भारतीय राजनीति नैतिकता पर आधारित नहीं है, जैसे–जैसे राजनीति नैतिकता से दूर होती जाती है, वैसे–वैसे समाज में भी भ्रष्टाचार जैसी बुराईयां बढ़ती जाती हैं और समाज का बहुमुचखी पतन होना शुरू हो जाता है। इसलिए उन्होंने राजनीति के आध्यात्मिकरण पर बल दिया और अच्छे साधनों को अपनाने का सुझाव दिया।

उपरोक्त राजनीतिक विचारों का अध्ययन करने के बाद कहा जा सकता है कि जयप्रकाश नारायण एक राजनीतिक दार्शनिक होने के साथ–साथ एक सामाजिक दार्शनिक भी थे। उनका आदर्श भारतीय समाज का पुनर्निर्माण करना था। उन्होंने जीवनभर समाज के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन लाने का प्रयास किया। उन्होंने सम्पूर्ण क्रान्ति का नारा देकर समाज के सर्वांगीण विकास का रास्ता तैयार किया। लेकिन फिर भी अनेक विद्वानों ने उनके राजनीतिक विचारों को आदर्शवाद की संज्ञा देकर पल्ला झाड़ लिया है। यदि निष्पक्ष तौर पर उनके विचारों का मूल्यांकन किया जाए तो यह बात सत्य है कि उनके विचार एक सच्चे देशभक्त व राष्टवादी विचारक के विचार हैं।

निष्कर्ष

जयप्रकाश नारायण भारतीय राजनीतिक चिंतन के एक महान प्रकाश पुँज हैं, क्योंकि 1974 में समग्र क्रांति के विचार देकर भारत में श्रीमति इन्दिरा गाँधी की राजनीति को एक सशक्त चुनौती देकर 1977 में मत–पत्र क्रांति की थी और भारत में 1967 से शुरू हुये गैर–कांग्रेसवाद को चरम तक पहुंचा कर भारतीय जनमानस को काफी प्रभावित किया था। पंडित जवाहर लाल नेहरू के काल में भी उनका नाम नेहरू के बाद कौन से विकल्प के रूप में काफी वजनदारी से विचारित किया जाता था। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी उन्हें अपने दल सहित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में वापिसी के लिये आमंत्रित किया था। वे एक महान स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, समाजवादी आंदोलन के सूत्रधार, उसके बाद सर्वोदय आंदोलन के गान्धीवादी नेता तथा अंत में भारत के समग्र क्रांति के लिये चलाये गये सशक्त आंदोलन के प्रेरणास्रोत, मशालवाहक के रूप में विख्यात मनीषी, विचारक एवं राजनीतिज्ञ (राजनीति शास्त्री) के रूप में प्रख्यात हैं। उनके राजनीतिक चिंतन प्रवाह का जानना विशेषतया भारतीय राजनीतिक वैचारिक जगत में उनका मूल्यांकन करना भारतीय राजनीति के विद्यार्थी के लिये अत्यंत आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गांधी, एम.के., हिंद स्वराज और अन्य लेखन, (सं।) एंथनी परेल, कैम्ब्रिज टेक्स्ट इन मॉडर्न पॉलिटिक्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1990।

2. गांधी, एम.के., एन ऑटोबायोग्राफी ऑर माई एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रुथ, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1927, 2002 (पुनर्मुद्रण)।

3. फिशर, लुइस, द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी, द एल्डन प्रेस, 1951

4. हिंगोरानी, आनंद टी. (सं.), एम. गांधी: टू द हिंदुओं एंड मुस्लिम, गांधी सीरीज वॉल्यूम III, कराची, 1942

5. मूर्ति, वी. वी., (सं.), आवश्यक लेखन– महात्मा गांधी, (लाइब्रेरी कॉपी फटी, इसलिए प्रकाशक और तिथि अज्ञात)

6. चटर्जी, पार्थ, नेशनलिस्ट थॉट एंड द कॉलोनियल वर्ल्ड : ए डेरीवेटिव डिस्कोर्स?, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1986

7. नंदी, आशीष, द इंटिमेट एनिमी : लॉस एंड रिकवरी ऑफ सेल्फ अंडर कॉलोनियलिज्म, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1983।

8. पारेख, भीखू, उपनिवेशवाद, परंपरा और सुधार : गांधी के राजनीतिक प्रवचन का एक विश्लेषण, ऋषि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1989।

9. भाभा, होमी (सं।), राष्ट्र का वर्णन, लंदन रूटलेज, 1990

10. बालकृष्णन, गोपाल (सं.), मैपिंग द नेशन, वर्सो, लंदन, न्यूयॉर्क, 1996।

11. कैनोवन, मार्गरेट, नेशनहुड एंड पॉलिटिकल थ्योरी, एडवर्ड एल्गर पब्लिशिंग कंपनी, 1996।

12. तामीर, येल, लिबरल नेशनलिज्म, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, प्रिंसटन, न्यू जर्सी, 1993।